

पंडितप्रवर टोडरमलजीकी

रहस्यपूर्ण चिट्ठी।

अर्थात्

आध्यात्मिक पत्रिका।

संग्रहकर्ता—

मास्टर छोटेलाल जैन।

प्रकाशकः—

मूलचन्द किसनदास कापड़िया,
मालिक, दिगम्बरजैनपुस्तकालय, कापडियाभवन-सूरत।

द्वितीयावृत्ति] वीर सं० २४६५ [प्रति १०००

"जैनविजय" प्रिन्टिंग प्रेस-सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित की।

मूल्य-ढाई आने।

निवेदन।

जैनोंके सुप्रसिद्ध विद्वान, श्री मोक्षमार्ग प्रकाशकके प्रणेता और गोमटसार, त्रिलोकसारादि महान् शास्त्रोंकी टीकाओंके बनानेवाले सवाई जयपुरनिवासी महान् जैन नररत्न-पंडितप्रवर टोडरमलजीको हुए करीब २०० वर्ष होचुके हैं, लेकिन आपके अगाध ज्ञानके कारण आपकी कीर्ति अमर ही है।

आपने विक्रम सं० १८११ में मुल्तान नगर (पंजाब) को अपने साधर्मी भाई श्री खानचन्दजी, गंगाधरजी, श्रीपालजी, सिद्धारथदासजी आदिको अध्यात्मज्ञानसे ओतप्रोत एक रहस्यपूर्ण चिट्ठी लिखी थी जो प्राचीन हस्तलिखित शास्त्रोंमें देखनेमें आई थी, जो प्रकट होनेयोग्य होनेसे इसे २३ वर्ष पहिले श्री० मास्टर छोटेलालजी जैन खुरईने प्राप्त कर उसे संशोधित की थी। और फिर श्री कर्तव्यप्रबोध कार्यालय खुरईकी ओरसे बाबू प्यारेलाल जैन पंचरत्नद्वारा सूरतमें छपाकर प्रकाशित कराई थी, जो देखतेर ही खतम हो गई थी। कई वर्षोंसे इसकी मांग आती रहती थी इसलिये हमने इस चिट्ठाकी यह दूसरी आवृत्ति प्रकट की है।

इसवार इसमें पं० टोडरमलजीका सांक्षिप्त परिचय (फोटो सहित) भी श्री० पं० परमेष्ठीदासजी जैन न्यायतीर्थसे लिखवाकर प्रकट किया है जिसे पढ़कर पाठकोंको मालूम होगा कि पं०

टोडरमलजी सिर्फ २८ वर्षकी अल्पायुमें ही जैन साहित्यकी
कैसे २ महान कार्य कर गये हैं।

आपका रचित मोक्षमार्ग प्रकाशक ग्रन्थ चार
प्रकाशित हो चुका है जो ज्ञानका सागर है।
छोटीसी चिट्ठी भी अध्यात्मरस पूर्ण होनेसे इसे
व मनन करनेसे अध्यात्मज्ञानकी प्राप्ति बहुत

इस चिट्ठीके संशोधक व संपादक मास्टर
इसपर जो भूमिका प्रथमावृत्तिमें लिखी थी
होनेसे साथमें प्रकट की जाती है। यह
लिये वे अतीव धन्यवादके पात्र हैं।

अध्यात्मज्ञानको बढ़ानेवाली यह
योग्य है। आशा है इस दूसरी आवृत्तिका
हो जायगा।

सूरत-वीर सं० २४६५
दि० श्रावण सुदी १५
ता: ११-८-३९

मूलचन्द



"सर्वमङ्गलनिधौ हृदे यस्मिन् सङ्गते निरुपमं सुखमेति।
मुक्तिरमा च वशीभवति द्राक् तं बुधा भजत शान्तरसेंद्रम्॥"

अर्थात् 'जिसके हृदयमें प्राप्त होनेसे अनुपम सुखकी प्राप्ति होती है और शीघ्र ही मुक्ति लक्ष्मी वशमें हो जाती है, बुद्धिमान पुरुष सम्पूर्ण मंगलोंके समुद्रस्वरूप उस शान्त रसेन्द्रका अनुभव सेवन करते हैं।"

जो किसी भी विद्याको पढ़कर अपने साधारण व विशेष प्रत्येक कार्योंमें उसका निरन्तर उपयोग करते रहते हैं व व्यावहारिक कार्योंमें जिनकी विद्याकी झलक दिखाई देती है वे ही सत्पुरुष वास्तव और आदर्श विद्वान कहे जाते हैं। जिन्होंने अपने घोर प्रयत्नों द्वारा आत्माकी अनन्त शक्तियोंका उद्घाटन करके शांति सुखका तत्व निचोड़ा है, जिन्होंने आत्मीक गूढ़ रहस्योंकी थाह लगाई है और सदा उनके सुनने और शंकाओंके समाधान करनेमें अपना समय सदुव्यय किया है, उन आदर्श विद्वानोंके आगे प्रत्येक देशके महान् पुरुष इस प्रकार हाथ जोड़े खड़े रहते हैं, जिस प्रकार कि मंत्रवेत्ताके आह्वाननपर देवता उपस्थित होते हैं।

उन्हीं आदर्श विद्वानोंमेंसे पंडितप्रवर टोडरमलजी भी आदर्श विद्वान हुए हैं। आप अध्यात्मरसके रसिक और पूर्ण ज्ञानी

थे। जिन्होंने उनके गोमटसार, लब्धिसार, आत्मानुशासन आदि पूर्ण पांडित्यकी प्रदर्शित करनेवाली महान ग्रन्थोंकी टीकाओंका अवलोकन किया है, उनसे उनकी विद्वत्ता छिपी नहीं है। आप उनके बनाये हुए मोक्षमार्गप्रकाशका जैन समाजमें आतुल्यतासे प्रचार है। प्रत्येक जैनधर्मका थोड़ा भी मर्म समझनेवाला व्यक्ति, उनके बनाये मोक्षमार्गप्रकाशका नित्य अध्ययन करके अपनी आत्माको शांतरसके आस्वादनसे कृतकृत्य मान सहस्र मुखसे पं० टोडरमलजीकी प्रशंसा करनेमें अपना सौभाग्य समझता है। यथार्थमें आपका नाम आचार्योंकी श्रेणीमें लिखने योग्य है।

उन्हीं पंडितप्रवरकी यह अध्यात्मके गूढ रहस्योंसे परिपूर्ण चिट्ठी जिसे हम छोटासा शास्त्र भी कहें तो अत्युक्ति न होगी, एक प्राचीन भँडारसे उपलब्ध हुई। जिसे उन्होंने अपने मुल्तानवासी शिष्योंके प्रश्नोंके उत्तरमें लिखी थी। पंडित टोडरमलजीने उन प्रश्नोंका उत्तर किस खूबीके साथ दिया है उसके विषयमें हमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वे तो पाठकोंके समक्ष ही हैं. परन्तु हमारे पूर्व विद्वान् अध्यात्मरसके रसिक भी व्यवहारमें कितने दक्ष रहते थे यह चिट्ठीके शीर्षक व्यवहारसे पूर्ण ज्ञात होता है।

"तुम्हें सहजानन्दकी प्राप्ति हो" कैसा शिष्टाचार पूर्ण आध्यात्मिक आनन्ददायक वाक्य है! यदि पाठकगण इस वाक्यपर थोड़ासा स्वयं विचार करके देखें तो मालूम पड़ेगा कि

यह वाक्य कितना महत्वपूर्ण है ! इसी भांति चिट्ठीके सम्पूर्ण वाक्योंमें अनुभवकी झलक दिखाई देती हैं। यद्यपि वर्तमान शैलीकी भाषामें इसे प्रकाशित करनेसे इसका विषय जनसाधारणकी समझमें और भी अच्छी तरह आजाता, परन्तु जैनसमाजके एक प्रसिद्ध विद्वानकी कीर्तिरक्षा, तथा जो भाव व आनन्द उनकी भाषामें पढ़नेसे आता है, कदाचित् नवीन भाषामें करनेसे आता इसमें सन्देह हैं। इसी कारणसे इसे प्रथमवार उन्हींकी भाषामें प्रकाशित करना ठीक समझा है। आशा है कि हमारे पाठकगण भी इसका उसी प्रकार पठन पाठन श्रवण तथा आदरपूर्ण प्रेमके साथ करेंगे जिस प्रकार कि उन्हीं पंडितप्रवर टोडरमलजीके बनाये मोक्षमार्गप्रकाशका कर रहे हैं।

यद्यपि इसे हमने दो प्राचीन हस्तलिखित प्रतियोंपरसे बड़ी सावधानीके साथ संशोधन किया है तथापि हमारी अज्ञानता तथा दृष्टिदोषसे कोई दोष रह गये हों तो कृपाकर पाठक उन्हें सूचित करके धन्यवादके पात्र होंगे। इत्यलम्।

खुरई-वीर सं० २४४२
आषाढ़ शुक्ला दशमी।

छोटेलाल मास्टर जैन।





स्व० विद्वद्वर्य पं० टोडरमलजी।

जन्म-विक्रम सं० १७९७ के करीब। स्वर्गवास-सं० १८२४ के करीब।

संक्षिप्त जीवनपरिचय—

पण्डितप्रवर टोडरमलजी।

श्रीमान् पण्डितप्रवर टोडरमलजी १९ वीं शताब्दीके उन प्रतिभाशाली विद्वानोंमेंसे थे जिनपर जैन समाज ही नहीं, सारा भारतीय समाज गौरवका अनुभव कर सकता है। १८वीं शताब्दीके अन्तमें या १९ वीं के प्रारम्भमें उनका शुभ जन्म ढूंढारदेशके सवाई जयपुर नगरमें हुआ था। उनके पिताका नाम जोगीदास था। वे दिगम्बर जैन धर्मके धारक प्रकाण्ड पण्डित थे। कुछ विद्वानोंका कथन है कि उनने खण्डेलवाल दि० जैन जातिमें जन्म लिया था। और उनका गोत्र भौंसा (बडजात्या) था।

कहा जाता है कि उनने ८ वर्षकी उम्रसे ही अपनी प्रखर बुद्धिके द्वारा लोगोंको आश्चर्यचकित करना प्रारम्भ कर दिया था। श्रवणमात्रसे उनको मोक्षशास्त्र आदि कण्ठस्थ होगये थे। कुछ ही महीनेमें सिद्धान्तकौमुदी जैसे क्लिष्ट व्याकरणका ज्ञान प्राप्त करके उनने षड्दर्शनका अध्ययन प्रारम्भ किया। इतना ही नहीं किन्तु बौद्धदर्शन, इस्लाम मजहब, श्वेताम्बराम्नायके सूत्रग्रन्थ और ढूंढकमत आदि तमाम प्रचलित मतमतांतरोंका गहरा अध्ययन किया था। साथ ही तमाम उपलब्ध दि० जैनग्रन्थोंका मनन तो किया ही था।

यह कथन मात्र चरित्रनायककी प्रशंसाके लिये कल्पित नहीं किया गया है, किन्तु उनके द्वारा रचे गये मोक्षमार्ग प्रकाशक

ग्रन्थसे स्पष्ट ज्ञात हो जायगा कि उनने समस्त ग्रन्थोंका गहराईके साथ अध्ययन किया था। तभी वे अपने ग्रन्थमें धर्मके ग्रन्थोंका स्पष्ट प्रमाण देसके हैं और अन्य धर्मावलम्बियोंकी विरोधी मान्यताओंका तर्क एवं प्रतिभापूर्वक खण्डन कर सके हैं।

यद्यपि पं० टोडरमलजीके समय अपने या अन्य मतोंके इतने सुलभ नहीं थे जितने कि आज हैं। फिर भी उनने मात्र २८ वर्षकी अल्पतर आयुमें उन्हें प्राप्त करके अध्ययन-मनन किया और साथ ही इतना लिखा जितना सतत ५० वर्षमें भी लिखा जाना असम्भवसा प्रतीत होता है। गोमट्टसार जीवकाण्ड कर्मकाण्ड, लब्धिसार, क्षपणासार, आत्मानुशासन, त्रिलोकसार आदि महाग्रंथोंकी भाषाटीकायें, मोक्षमार्ग प्रकाशककी रचना तथा पुरुषार्थसिद्धयुपाय जैसे ग्रन्थकी टीका लिखना आप जैसे प्रतिभाशाली, प्रकाण्ड पण्डितका ही काम था।

आज हम जब २८ वर्षकी आयुमें अपना साधारण अध्ययन ही समाप्त नहीं कर पाते तब पं० टोडरमलजी इतनी अल्पावस्थामें यह अमर रचनायें करके परलोकवासी होगये थे।

पण्डित टोडरमलजीका अध्ययन तो गम्भीर था, साथ ही वे व्याख्यानचतुर और वादविवादपटु भी थे। उनकी विद्वत्ताका प्रभाव राज्य पर भी पड़ा था, इसलिये उन्हें राजसभामें भी अच्छा स्थान प्राप्त था। उनका प्रखरपाण्डित्य राज्यकी विद्वत्परिषद्के पण्डितोंको अखरने लगा और वे कईबार पराजित होनेसे उनपर द्वेषभाव रखने लगे।

कहा जाता है कि इस द्वेषका इतना भयंकर परिणाम आया कि ज्ञानके उगते हुये सूर्यको अल्पकालमें ही अस्त होजाना पड़ा। विधर्मी विद्वानोंकी दुष्टतासे राजा प्रभावित होगया और उसके परिणामस्वरूप उन्हें प्राणदण्ड दिया गया।

पण्डितप्रवर टोडरमलजी एकनिष्ठ होकर ग्रन्थ लिखने बैठते थे। वे अपने कार्यमें इतने लीन होजाते थे कि उन्हें खानेपीनेकी भी सुध न रहती थी। इस विषयमें एक जनश्रुति है कि वे जब एक ग्रन्थकी भाषा टीका लिख रहे थे तब ६ मासतक उनकी माताने भोजनमें नमक नहीं डाला था। किन्तु कार्यलीन होनेसे पण्डितजी स्वादका अनुभव नहीं करने पाये। लेकिन जब उनका ग्रन्थ समाप्त होगया तब वे उस दिन भोजन करते समय बोले कि माताजी! आज दालमें नमक क्यों नहीं डाला? उत्तरमें माताजीने कहा कि मैं तो ६ माहसे नमक नहीं डाल रही थी। इस घटनासे श्री० पं० टोडरमलजीकी कार्यतन्मयता ज्ञात होती है।

पण्डितजीके जन्म-मरणका ठीक संवत् तो अभीतक ज्ञात नहीं होसका है, किंतु गोमट्टसारकी टीकाकी प्रशस्तिमें उनने अपना समय और कुछ परिचय दिया है। एक दोहा छन्दमें उनने पितामहका नाम रमापति और पिताका नाम जोगीदास लिखा है। उसका अर्थ भावप्राण (चैतन्य अर्थ) भी निकलता है। यथाः—

रमापति स्तुत गुन जनक, जाको जोगीदास।
सोई मेरा प्रान है, धारै प्रगट प्रकाश॥ ३०॥

—संदृष्टि अधिकार पत्र २०४

पण्डित टोडरमलजीने गोम्मटसारकी टीकाका कारण तथा अपना परिचय इसप्रकार दिया है:—

चौपाई ।

मैं आतम अरु पुद्गलखंध । मिलिकै भयो परस्पर बंध ॥
सो असमान जाति पर्याय । उपज्यो मानुष नाम कहाय ॥ ३८
मातगर्भमें सो पर्याय, करिकै पूरण अंग सुभाय ।
बाहिर निकसि प्रगट जब भयो, तब कुटुम्बको भेलो भयो ॥ ३९
नाम धर्यो तिनि हर्षित होय, टोडरमल्ल कहै सब कोय ।
ऐसें यह मानुष पर्याय, बधत भयो निजकाल गमाय ॥ ४० ॥
देश ढुंढाहड़ माहि महान, नगर सवाई जयपुर थान ।
तामें ताको रहनो घनो, थोरो रहनो ओडै बनो ॥ ४१ ॥

सवैया ।

कर्मको क्षयोपशम होत भयो मेरे कछु
बुद्धि को विकाश ताते विद्या-अभ्यास कर्यो है
होनहार नीको तातै ऐसोही बनाव बन्यो
भाषा जैन ग्रंथनिमें ज्ञान विस्तर्यो है
सार्थक गोम्मटसार लब्धिसार आदिनिकी
अर्थ भावसहको तब ऐसो भाव भयो है
इनकी जो भाषाटीका करौं तौ सुगमबुद्धि घनो
जाने घने भये जो प्रमाण अनुभयो है ॥ ४६ ॥

चौपाई ।

राजमल्ल साधर्मी एक, धर्म सधैया सहित विवेक ।
सो नानाविधि प्रेरक भयो, तब यहु उत्तम कारज थयो ॥ ४८ ॥
संवत्सर अष्टादशयुक्त, अष्टादशशत लौकिक युक्त ।
माघ शुक्ल पंचम दिन होत, भयो ग्रंथ पूरन उद्योत ॥ ५० ॥

पण्डित टोडरमलजीकी आजीविकाका प्रबन्ध श्री० अमर-

चन्दजी जैन दीवानके कारण जयपुर राज्यकी ओरसे था। यही राज्य उनके कालका कारण बन गया। यदि वे अधिक जीवित रहते तो कल्पनातीत साहित्य निर्माण कर जाते। फिर भी वे अपने मात्र २८ वर्षके जीवन कालमें जो कुछ लिख गये हैं वह हमारे जीवन-भरको अध्ययन और मननके लिये पर्याप्त है। उनका केवल मोक्षमार्ग प्रकाशक ही हमारे ज्ञान और मननके लिये बस है। उसे तो हम ज्ञानका रत्नाकर कह सकते हैं। उसमें उनने कई ऐसी बातोंका निर्भीकताके साथ विवेचन किया है जिन्हें आधुनिक विद्वान कहनेका भी साहस नहीं कर सकते।

पण्डितप्रवर टोडरमलजीने नीच ऊँचके सम्बन्धमें मोक्षमार्ग-प्रकाशकके पृष्ठ ९० (आवृत्ति २४६४) में लिखा है:—

"गोत्र कर्मके उदयतैं नीच ऊँच कुल विषे उपजै है। तहां ऊँच कुलविषे उपजैं आपको ऊँचा मानै है अर नीच कुलविषे उपजैं आपकौं नीचा मानै हैं। सो कुल पलटनेका उपाय तौ याकूं भासै नाहीं। तातैं जैसा कुल पाया तैसा ही कुलविषे आपो मानै है। सो कुल अपेक्षा आपकौं ऊँचा नीचा मानना भ्रम है। ऊँचा कुलका कोइ निंद्य कार्य करै तो वह नीचा होइ जाय, अर नीचा कुल विषे कोइ श्लाघ्य कार्य करै तौ वह ऊँचा होइ जाय।"

यहां यह स्पष्ट बताया है कि कुलकी अपेक्षा ऊँचनीच मानना भ्रम है। उच्चता नीचता तो अच्छे और बुरे कार्यों-आचरणोंपर आधार रखती है। इसलिये जो अच्छे कर्म करता है वह उच्च है और जो बुरे कृत्य करता है वह नीच है। यह कितने सुन्दर विचार हैं

कथाग्रन्थोंके विषयमें भी उनने एक ऐसी बात कही है
यदि आज कहा जाय तो हमारे पण्डितजन नाराज हो जावें
आगमका अश्रद्धानी घोषित कर दें। वह कथन इस प्रकार है:

"प्रथमानुयोग विषै जे मूल कथा हैं ते तौ जैसी हैं तैसी ही निरूपित हैं। अर तिन विषै प्रसंग पाय व्याख्यान हो है, सो कोई तौ जैसाका तैसा हो है, कोई ग्रन्थकर्ताका विचारकै अनुसार होय परन्तु प्रयोजन अन्यथा न हो है।........जैसैं धर्मपरीक्षा विषै मूर्खनिकी कथा लिखी, सो एही कथा मनोवेग कही थी ऐसा नियम नाहीं, परन्तु मूर्खपनाकौं ही पोषती कोई वार्ता कही, ऐसा अभिप्राय पोषै है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।"

—मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ० ४०२

"इस काल विषैं प्रत्यक्ष ज्ञानी वा बहुश्रुतनिका तौ अभाव भया, अर स्तोकबुद्धि ग्रन्थ करनेके अधिकारी भए। तिनकै भ्रमतैं कोई अर्थ अन्यथा भासै, ताकौं तैसैं लिखैं। विषै
केई जैनमत विषै भी कषायी भए हैं, सो ति
अन्यथा कथन लिखा है। ऐसैं
शास्त्रनि विषै
वर्तमान

सो अब काल दोषतैं इन ही दोषनिकौं लगाय आहारादि ग्रहै हैं।"

(पृष्ठ २७४)

इसी प्रकार और भी अनेक बातें हैं जिन्हें पण्डितप्रवर टोडरमलजीने निर्भयताके साथ कहा है। कमसे कम उनके मोक्षमार्ग-प्रकाशकको एकवार अवश्य पढ़ना चाहिये। उसमें मौलिक विचार, तार्किक कथन और सत्यका प्रतिपादन पद पदपर दिखाई देगा।

पण्डितप्रवरकी यह एक चिट्ठी ही ध्यानसे पढ़िये और देखिये कि उनने पत्रव्यवहारमें भी आध्यात्मिक भावोंको किस प्रकार कूट कूटकर भरा है। इसमें भी उनकी तार्किक शैली और प्रखर पांडित्य स्पष्ट दिखाई देता है। इतना होनेपर भी वे अपनेको नगण्य मानते थे। उनने चिट्ठीके अन्तमें लिखा है कि—" सामर्मीकै तौ परस्पर चर्चा ही चाहिये, अर मेरी तौ इतनी बुद्धि है नाहीं।" यह है प्रशस्त निरभिमानीपन !

अन्तमें उनने यही भावना की है कि " तुम अध्यात्म-आगम ग्रन्थका अभ्यास रखना अर स्वस्वरूप विषैं मग्न रहना। अर तुम कोई विशेष ग्रन्थ जानें होवे तो मुझकौं लिख भेजना।"

इसमें उनने दूसरोंको स्वाध्याय रत होनेकी प्रेरणा की है और अपनी जिज्ञासावृत्ति प्रगट की है। सचमुच ही हमारे मनसे तो पंडितप्रवर टोडरमलजी आचार्यकल्प हैं। उनके प्रकाण्ड पाण्डित्यके सामने हम सामान्यजनोंका मस्तक नम जाना स्वाभाविक ही है।

गांधीचौक, सूरत
ता० १७-८-३९ } परमेष्ठीदास

पंडितप्रवर टोडरमलजीकी रहस्यपूर्ण चिट्ठी।

॥ श्री ॥

सिद्ध श्री मुलतान नग्र महाशुभस्थान विषैं, साधर्मी भाई अनेक उपमा योग्य अध्यात्मरस रोचक भाई श्री खानचन्दजी, गंगाधरजी, श्रीपालजी, सिद्धारथदासजी, अन्य सर्व साधर्मी योग्य लिखतं टोडरमलके श्री प्रमुख विनय शब्द अवधारना। यहां जिथा सम्भव आनन्द है, तुम्हारे चिदानन्द घनके अनुभवसे सहजानन्दकी वृद्धि चाहिए।

अपरञ्च पत्र १ तुम्हारो भाईजी श्री रामसिंघजी भुवानीदासजीको आया था तिसके समाचार जहानाबादतैं और साधर्मियोंने लिखा था। सो भाईजी ऐसे प्रश्न तुम सारिखे ही लिखें। अबार वर्तमान कालमें अध्यात्मके रसिक बहुत थोड़े हैं। धन्य हैं जे स्वात्मानुभवकी वार्ता भी करै हैं, सो ही कहा है:—

श्लोक-वनिताप्रीतचित्तेन, तस्य वार्तापि हि श्रुता।
स निश्चे तं द्रव्यो, भावनिर्वानभाजनं॥

अर्थ—जिहि जीव चितकर तत्वकी बात भी सुनी, सो जीव विशेष कर भव्य है। अल्प काल विषैं मोक्षका पात्र है। सो भाईजी तुम प्रश्न लिखे तिस कर मेरी बुद्धि अनुसार कछु लिखिए है सो जानना। और अध्यातम आगमकी चर्चा गर्भित पत्र तो शीघ्र २ देवी करो। मिलाप कभी होगा तब होगा। अर निरन्तर स्वरूपानुभवमें रहना। श्रीरस्तु।

अथ स्वानुभव दशा विषै प्रत्यक्ष परोक्षादिक प्रश्ननिके उत्तर बुद्धि-अनुसार लिखिये हैं।

तहां प्रथम ही स्वानुभवका स्वरूप जानने निमित्त लिखे हैं।

जीव पदार्थ अनादितैं मिथ्यादृष्टी है सो आपा-परके यथार्थरूप विपरीत श्रद्धानका नाम मिथ्यात्व है। बहुरी जिस काल किसी जीवके दर्शन मोहके उपशम, क्षयोपशमतैं आपापरका यथार्थ श्रद्धानरूप तत्वार्थ श्रद्धान होय, तब जीव सम्यक्ती होय है। यातैं आपापरका श्रद्धान विषैं शुद्धात्म श्रद्धानरूप निश्चय सम्यक्त गर्भित है। बहुरि जो आपापरका श्रद्धान नहीं है अर जिनमत विषैं कहे जे देव, गुरु, धर्म तिन ही कूं माने हैं, अन्य मत विषैं कहे देवादिक, वा तत्वादि तिनको नहीं माने हैं, तो ऐसे केवल व्यवहार सम्यक्त करि सम्यक्ती नाम पावै नहीं। तातैं स्वपर भेदवि-ज्ञानको लिए जो तत्वार्थ श्रद्धान होय सो सम्यक्त जानना।

बहुरि ऐसे सम्यक्ती होते संते जो ज्ञा
छटा मनके द्वार, क्षयोपशम
कुश्रुति रूप होय

मति श्रुतिरूप सम्यग्ज्ञान भया। सम्यक्ती जेता कछु जाने सो जानना सर्व सम्यग्ज्ञान रूप है।

जो कदाचित् घट पटादिक पदार्थनकूं अयथार्थ भी जानै तो यह आवरण जनित उदयको अज्ञान भाव है सो क्षयोपशम रूप प्रकट ज्ञान है सो तौ सर्व सम्यग्ज्ञान ही है। जातै जानने विषै विपरीत रूप पदार्थनकों न साधै है। सो यह सम्यग्ज्ञान केवलज्ञानका अंश है। जैसे थोड़ासा मेघपटल विलय भये कछु प्रकाश प्रकटै है सो सर्व प्रकाशका अंश है।

जो ज्ञान मति श्रुतिरूप प्रवर्तै है सो ही ज्ञान वधिता वधिता केवलज्ञान रूप होय सम्यग्ज्ञानकी अपेक्षा जाति एक है। बहुरि इस सम्यक्तीके परिणाम विषै सविकल्प निर्विकल्परूप होय दो प्रकार प्रवर्तै तहां जो विषय कषायादिरूप या पूजा, दान शास्त्राभ्यासादिक रूप प्रवर्तै है सो सविकल्परूप जानना। यहां प्रश्नः—

जो शुभाशुभरूप सम्यक्तका अस्तित्व कैसे पाइए ?

ताका समाधान—जैसे कोई गुमास्ता साहूके कार्य विषै प्रवर्तै है, उस कार्यको अपना भी कहे हैं हर्ष विषादको भी पावै है, तिस कार्य विषै प्रवर्तै है, तहां अपनी और साहूकी जुदाईकों नाहीं विचारै है परन्तु

अंतरंग श्रद्धान ऐसा है कि यह मेरा कारज नाहीं ऐसा कार्यकर्त्ता गुमास्ता साहूकार है।

सो साहूके धनकूं चुराय अपना मानै तो गुमास्ता चोर ही कहिए। तैसे कर्मजनित शुभाशुभरूप कार्यको कर्त्ता तद्‌रूप परणमै है। तथापि अन्तरंग ऐसा श्रद्धान है कि यह कार्य मेरा नाहीं। जो शरीराश्रित व्रत संयमकों भी अपना मानै तो मिथ्यादृष्टि होय सो ऐसे सविकल्प परिणाम होय।

अब सविकल्पहीके द्वारकर निर्विकल्प परिणाम होनेका विधान कहिए हैः—

सो सम्यक्‌ी कदाचित् स्वरूप ध्यान करनेको उद्यमी होय है तहां प्रथम भेदविज्ञान स्वपरस्वरूपका करै, नोकर्म, द्रव्यकर्म, भावकर्म रहित चैतन्य चित्त चमत्कारमात्र अपना स्वरूप जानै, पीछै परका भी विचार छूट जाय, केवल स्वात्मविचार ही रहै है। तहां अनेक प्रकार निजस्वरूप विषै अहंबुद्धि धरै है। चिदानन्द हौं, शुद्ध हूँ, सिद्ध हूँ, इत्यादिक विचार होते संते सहज ही आनन्द तरंग उठै है, रोमांच होय है, ता पीछे ऐसा विचार तो छूट जाय, केवल चिन्मात्र स्वरूप भासने लागै। तहां सर्व परिणाम उस रूप विषै एकाग्र होय प्रवर्त्तै। दर्शन ज्ञानादिकका वा नय भी विचार विलय जाय।

चैतन्य स्वरूप जो सविकल्प ताकरि निश्चय किया था तिस ही विषै व्याप्य व्यापक रूप होय ऐसे प्रवर्त्त। जहां ध्याता ध्यायपनो दूर भयो सो ऐसी दशाका नाम निर्विकल्प अनुभव है। सो वड़े नयचक्र विषै ऐसे ही कहा है:—

गाथा।

तच्चाणि सण काले समय बुझेदि जुत्तमो गणणो।
आराहसमिरा पञ्चख्यो अणहवो जम्हा ॥ १ ॥

अर्थ—तत्त्वका अवलोकनका जो काल ता विषै समय जो है शुद्धात्मा ताको जुक्ता जो नय प्रमाण ताकरि पहिले जानै। पीछैं आराधन समय जो अनुभव काल, तिहि विषै नय प्रमाण नाही है। जातैं प्रत्यक्ष अनुभव है। जैसे रत्नकी खरोद विषै अनेक विकल्प करै हैं, प्रत्यक्ष वाको पहरिये तब विकल्प नाहीं, पहोरनेका सुख ही है। ऐसे सविकल्पके द्वार निर्विकल्प अनुभव होय है।

बहुरि निर्विकल्प अनुभव विषै जो ज्ञानपञ्चेन्द्री, छट्ठा मनके द्वार प्रवर्त्तै था सो ज्ञान सब तरफसों सिमटकर केवल स्वरूप सन्मुख भया। जातैं वह ज्ञान क्षयोपशम रूप है सो एक काल विषै एक ज्ञेयहीको जानै, सो ज्ञान स्वरूप जाननेको प्रवर्त्या, तब जानना सहज ही तहां ऐसी

भी लक्षण है, ऐसा अनुभव दशा विषै संभवै है। तथा नाटकके कवित्त विषै कहा है:—

दोहा।

वस्तु विचारत ध्यावतैं, मन पावै विश्राम।
रस स्वादित सुख ऊपजै, अनुभव याकौ नाम॥

ऐसे मन विना जुदा परिणाम स्वरूप विषै प्रवर्त्तै नाहीं तातैं स्वानुभवकौं मन जनित भी कहिए। सो अतेन्द्री कहनेमें अरु मन जनित कहनेमें कछु विरोध नहीं, विवक्षा भेद है।

बहुरि तुम लिख्या "जो आत्मा अतेन्द्रिय है" सो अतेन्द्रिय ही कर ग्रहा जाय सो मन अमूर्तीकका भी ग्रहण करै हैं, जातैं मतिश्रुत ज्ञानका विषय सर्व द्रव्य कहे हैं। उक्तं च तत्वार्थसूत्रे—

"मतिश्रुतियोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु।"

बहुरि तुमने "प्रत्यक्ष परोक्षका प्रश्न लिख्या" सो भाईजी, प्रत्यक्ष परोक्षके तौ भेद हैं नाहीं। चौथे गुणस्थान सिद्ध समान क्षायक सम्यक्त हो जाय है, तातैं सम्यक्त तौ केवल यथार्थ श्रद्धानरूप ही है सो शुभाशुभ कार्यकर्त्ता भी रहै हैं तातैं तुमने जो लिख्या था कि "सम्यक्त प्रत्यक्ष है व्यवहार सम्यक्त परोक्ष है" सो ऐसा नाहीं है, तौ तीन भेद

तहां उपशम सम्यक्त अर क्षायक सम्यक्त तौ निर्मल है, जातैं मिथ्यात्वके उदय करि रहित हैं, अर क्षयोपशम सम्यक्त समल है। बहुरि इस सम्यक्त विषैं प्रत्यक्ष परोक्ष भेद तौ नाहीं है।

क्षायक सम्यक्तकै शुभाशुभ रूप प्रवर्तता वा स्वानुभवरूप प्रवर्तता सम्यक्त गुण तौ सामान्य ही है तातैं सम्यक्तके तौ प्रत्यक्ष परोक्ष भेद न मानना। बहुरि प्रमाणके प्रत्यक्ष परोक्ष भेद हैं सो प्रमाण सम्यग्ज्ञान है तातैं मतिज्ञान श्रुतज्ञान तौ परोक्ष प्रमाण हैं। अवधि मनःपर्यय केवलज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

"आद्ये परोक्षं प्रत्यक्षमन्यत्"

ऐसा सूत्र कहा है तथा तर्कशास्त्र विषैं ऐसा लक्षण प्रत्यक्ष परोक्षका कहा है:—

"स्पष्टप्रतिभासात्मकं प्रत्यक्षमस्पष्टं परोक्षं।"

जो ज्ञान अपने विषयकौं निर्मलतारूप नीकै जानै सो प्रत्यक्ष अर स्पष्ट नीकै न जानै सो परोक्ष, सो मतिज्ञान श्रुतिज्ञानका विषय तौ घना परन्तु एक ही ज्ञेयकौं सम्पूर्ण न जान सकै तातैं परोक्ष है। और अवधि मनः पर्ययके विषय थोरे हैं, तथापि अपने विषयकौं स्पष्टनीकै जानै तातैं एक देश प्रत्यक्ष है, अर केवल सर्व ज्ञेयकौं आप स्पष्ट जानै तातैं सर्व

बहुरि प्रत्यक्षके दोय भेद हैं? एक परमार्थ प्रत्यक्ष व्यवहार प्रत्यक्ष है। सो अवधि मनःपर्यय केवल तौ स्पष्ट प्रतिभासरूप है ही तातैं पारमार्थिक है। बहुरि नेत्रादिकनैं वरणादिककौं जानिए है। तातैं इनकौं व्यवहारक प्रत्यक्ष कहिए, परन्तु जो एक वस्तुमें अनेक वर्ण हैं ते नेत्र कर नीके ग्रहे जाय हैं

नाहीं तातैं अनुभव विषै अवधि मनःपर्यय ... आत्माका जानना नाहीं। बहुरि यहां आत्माकूं स्व नीके जानै हैं, तातैं पारमार्थिक प्रत्यक्षपना तौ नाहीं, बहुरि जैसे नेत्रादिक जानिए है तातैं एक निर्मलता लिये भी आत्माके असंख्यात प्रदेशादि न जानिए है तातैं सांव्यवहारिक प्रत्यक्षपणे सम्भवै नाहीं।

सो आगम अनुमानादिक परोक्ष ज्ञान ... आत्माका अनुभव होय है। जैनागम विषै ... आत्माका स्वरूप कहा है ताकूं तैसा जान उस विषै परिणामनिकौं मग्न करै है तातैं आगम परोक्ष प्रमाण कहिए, अथवा मैं आत्मा ही हूँ तातैं मुझ विषै ज्ञान है। जहां २ ज्ञान तहां २ आत्मा है जैसे सिद्धादिक हैं। बहुरि जहां आत्मा नाहीं तहां ज्ञान भी नाहीं जैसे मृतक कलेवरादिक हैं ऐसे अनुमान करि वस्तुका निश्चय कर उस विषै परिणाम मग्न करै है, तातैं अनुमान परोक्ष प्रमाण कहिए अथवा आगम अनुमानादिक कर जो वस्तु ... तिसहीकौं याद रखकैं उस विषै ... है तातैं स्मृति कहिए ऐसे ... विषै परोक्ष प्रमाण ... स्वरूप

कछू विशेष जानपना होता नाहीं। बहुरि यहां प्रश्नः—

जो सविकल्प निर्विकल्प विषैं जाननेका विशेष नाहीं तो अधिक आनन्द कैसे होय है ?

ताका समाधान—सविकल्प दशा विषैं ज्ञान अनेक ज्ञेयकौं जानने रूप प्रवर्तै था ते निर्विकल्प दशा विषैं केवल आत्माहीका जानना है। एक तो यह विशेष है, दूसरा यह विशेष जो परिणाम नाना विकल्प विषैं परिणमैं था सो केवल स्वरूप ही सौं तदात्मरूप होय प्रवर्त्यो, दूसरा यह विशेष भया ऐसे विशेष होते कोई वचनातीत ऐसा अपूर्व आनन्द होय है। जो विषय सेवन विषैं उसके अंशकी भी जात नाहीं तातैं उस आनन्दकौं अतेन्द्रिय कहिये। बहुरि यहां प्रश्नः—

जो अनुभव विषैं भी आत्मा परोक्ष ही है तौ ग्रन्थन विषै अनुभवकूं प्रत्यक्ष कैसे कहिए?

ऊपरकी गाथा विषै ही कहा है। "पचक्खो अणुहवो जम्हा" ताका समाधान—अनुभव विषै आत्मा तौ परोक्ष ही है, कछू आत्माके प्रदेश आकार तौ भासते नाहीं परन्तु जो स्व रूप विषै परिणाम मग्न होते स्वानुभव भया, सो वह स्वानुभव प्रत्यक्ष है। स्वानुभवका स्वाद कछू आगम अनुमानादिक परोक्ष प्रमाणादिक कर न जानै हैं। आप ही अनुभवके रस

स्वादकौं वेदै है। जैसे कोई आंधा पुरुष मिश्रीकौं आस्वादै है, तहां मिश्रीके आकारादिक तो परोक्ष हैं, जो जिह्वाकरि स्वाद लिया है सो वह स्वाद प्रत्यक्ष है ऐसा जानना।

अथवा जो प्रत्यक्षकीसी नाईं होय तिसकौं भी प्रत्यक्ष कहिए। जैसे लोक विषै कहिये है हमने स्वप्न विषै वा ध्यान विषै फलाने पुरुषकौं प्रत्यक्ष देखा, सो प्रत्यक्ष देखा नाहीं, परंतु प्रत्यक्षकीसी नाईं प्रत्यक्षवत् यथार्थ देखौ तातैं प्रत्यक्ष कहिए। तैसे अनुभव विषै आत्मा प्रत्यक्षकी नाईं यथार्थ प्रतिभासै है तातैं इस न्याय करि आत्माका भी प्रत्यक्ष जानना होय है ऐसे कहिए है सो दोष नाहीं। कथन अनेक प्रकार है सो सर्व आगम अध्यात्म शास्त्रनसौं विरोध न होय तैसे विवक्षा भेद करि कथन जानना। यहां प्रश्न:—

जो ऐसे अनुभव कौन गुणस्थानमें कहैं हैं ?

ताका समाधान:—चौथेहीसे होय है परन्तु चौथे तो बहुत कालके अन्तरालसैं होय है और ऊपरके गुणठाने शीघ्र २ होय हैं। बहुरि प्रश्न:—

जो अनुभव तो निर्विकल्प है तहां ऊपरके और नीचेके गुणस्थाननिके भेद कहां ?

ताका उत्तर—परिणामनकी मग्नता विषै विशेष है जैसे दोय पुरुष नाव ले छै अर दोहीका परिणाम

नाव विर्षें हैं तहां एककै तो मग्नता विशेष है अर एककैं स्तोक है तैसे जानना। बहुरि प्रश्नः—

जो निर्विकल्प अनुभव विर्षें कोई विकल्प नाहीं तो शुक्लध्यानका प्रथम भेद प्रथक्त्ववितर्क वीचार कहा तहां प्रथक्त्ववितर्क वीचार नाना प्रकार श्रुत अर वीचार, अर्थ, व्यञ्जन, योग, संक्रिमन ऐसे क्यों कहा ?

तिसका उत्तरः—कथन दोय प्रकार है–एक स्थूलरूप है, एक सूक्ष्मरूप है। जैसे स्थूलता करि तो छटे ही गुणस्थानै सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत कहा, अर सूक्ष्मता कर नवमें ताईं मैथुन संज्ञा कही तैसे यहां अनुभव विर्षें निर्विकल्पता स्थूलरूप कहिये है। बहुरि सूक्ष्मता करि प्रथक्त्ववितर्क वीचारादिक भेद वा दशमा ताईं कषायादि कहे हैं। सो अब आपके जाननेमें वा अन्यके जाननेमें आवे ऐसा भावका कथन स्थूल जानना अर जो आप भी न जानै केवली भगवान ही जानै सो ऐसे भावका कथन सूक्ष्म जानना अर चरणानुयोगादिक विर्षें स्थूल कथनकी मुख्यता है अर चरणानुयोगादिक विर्षें सूक्ष्म कथनकी मुख्यता है ऐसा भेद और भी ठिकानै जानना। ऐसे निर्विकल्प अनुभवका स्वरूप जानना।

सो दृष्टांत प्रदेशनकी अपेक्षा नहीं, यह गुणकी अपेक्षा है। अर सम्यक्त विषै अनुभव प्रत्यक्षादिकके प्रश्न लिखे थे तुमने, ... बुद्धि अनुसार लिख्या है। तुम हू जिनवानीतैं परीक्षासैं मिलाय लेना अर विशेष कहां ताईं जो पात जानिए सो लिखनेमें आवे नहिं। मिले कहिये भी सो मिलना कर्माधीन, तातैं भला चैतन्यस्वरूपके उपमका अनुभवमें रहना सो वर्तमानकाल विषै अध्यात्म तत्व तो

तिस समयसार ग्रन्थकी अमृतचन्द्र टीका संस्कृत विषै है अर आगमकी चर्चा विषै है। तथा और भी अन्य विषै है, सो जानी सो सर्व लिखनेमें आवे नाहिं। तातैं तुम अध्यात्म आगम ग्रन्थका अभ्यास रखना अर स्वरूप विषै मग्न रहना अर तुम कोई विशेष ग्रन्थ जाने होवे तो मुझकौं लिख भेजना। साधर्मीकैं तो परस्पर चर्चा ही चाहिए, अर मेरी तौ इतनी बुद्धि है नाहीं, परन्तु तुम सारिखे भाइनसौं परस्पर विचार है, सो सब कहांतक लिखिये? जेते मिलना नहीं तेतैं तौ पा...

निर्विकल्परूप ज्ञेयकौं जानै तैसे ए भी जानै सो तौ है नाहीं, तातैं प्रत्यक्ष परोक्षका विशेष जानना।

उक्तं च अष्टसहस्री मध्ये—श्लोक—

स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने।
भेदसाक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्तुतमो भवेत्॥

याका अर्थ—स्याद्वाद जो श्रुतज्ञान अर केवलज्ञान दोऊ सर्व तत्त्वनके प्रकाशनहारे हैं, विशेष इतना-केवलज्ञान प्रत्यक्ष है, श्रुतज्ञान परोक्ष है। बहुरि वस्तु है सो और नाहीं। बहुरि तुम लिख्याः—

निश्चय सम्यक्तका स्वरूप अर व्यवहार सम्यक्तका स्वरूप?

सो सत्य है, परंतु इतना जानना, सम्यक्तीकै व्यवहार सम्यक्त विषै निश्चय सम्यक्त गर्भित है सदैव गमनरूप है। बहुरि लिखीः—

कोई साधर्मी कहै है आत्माकौं प्रत्यक्ष जानै तौ कर्मवर्गणाकौं क्यों न जानै?

सोई कहा है। आत्माकौं प्रत्यक्ष तौ केवली ही जानै तौ कर्मवर्गणाकौं अवधि, ज्ञान भी जानै है। बहुरि तुम लिख्याः—

द्वितीयाके चन्द्रमाकी ज्यों आत्माके प्रदेश थोरे खुले कहो?

बहुरि भाईजी, तुम तीन दृष्टांत लिखे वा दृष्टांत विषैं प्रश्न लिखा सो दृष्टांत सर्वांग मिलता नाहीं सो दृष्टांत है सो एक प्रयोजनकौं दिखावै है सो यहां द्वितीयाका बिधु (चन्द्रमा) जलबिंदु अग्निकिणका ए तौ एकदेश है अर पूर्णमासीको चन्द्र अग्निकुंड ए सर्वदेश है। तैसे ही चौथे गुणस्थान आत्माकौं ज्ञानादि गुण एक-देश प्रगट भये गए हैं तिनकी अर तेरहें गुणस्थान आत्माके ज्ञानादिक गुण सर्व प्रगट होय हैं तिनकी एक जाति है तहां तुम प्रश्न लिखाः—

एक जाति है जैसे केवली सर्वज्ञेयकौं प्रत्यक्ष जाने हैं तसे चौथेवाला भी आत्माकौं प्रत्यक्ष जानता होगा?

सो भाईजी, प्रत्यक्षताकी अपेक्षा एक जाति नाहीं सम्यग्ज्ञानकी अपेक्षा एक जाति है। चौथेवालेके मति श्रुतरूप सम्यग्ज्ञान है। तेरहें केवलरूप सम्यग्ज्ञान है। बहुरि एकदेश सर्वदेशका तौ अन्तर इतना ही है जो मतिश्रुतवाला अमूर्तिक वस्तुकौं अप्रत्यक्ष अमूर्तिक वस्तुकौं भी प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष किंचित अनुक्रमसौं जाने हैं। अर सर्वथा सर्वकौं केवलज्ञान युगपत् जाने है वह परोक्ष जानै यह अप्रत्यक्ष जानै, इतना ही विशेष है अर सर्व प्रकार एक ही जाति कहिए तौ जैसे केवली युगपत् अप्रत्यक्ष अप्रयोजनरूप

निर्विकल्परूप ज्ञेयकौं जानै तैसे ए भी जाने सो तौ है नाहीं, तातैं प्रत्यक्ष परोक्षका विशेष जानना।

उक्तं च अष्टसहस्री मध्ये—श्लोक—

स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतत्वप्रकाशने।
भेदसाक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्तुतमो भवेत् ॥

याका अर्थ—स्याद्वाद जो श्रुतज्ञान अर केवलज्ञान दोय सर्व तत्वनके प्रकाशनहारे हैं, विशेष इतना-केवलज्ञान प्रत्यक्ष है, श्रुतज्ञान परोक्ष है। बहुरि वस्तु है सो और नाहीं। बहुरि तुम लिख्याः—

निश्चय सम्यक्तका स्वरूप अर व्यवहार सम्यक्तका स्वरूप ?

सो सत्य है, परंतु इतना जानना, सम्यक्तीके व्यवहार सम्यक्त विषै निश्चय सम्यक्त गर्भित है सदैव गमनरूप है। बहुरि लिखीः—

कोई साधर्मी कहे हैं आत्माकौं प्रत्यक्ष जानैं तौ कर्मवर्गणाकौं क्यौं न जानैं ?

सोई कहा है। आत्माकौं प्रत्यक्ष तौ केवली ही जानैं तौ कर्मवर्गणाकौं अवधि, ज्ञान भी जानै है। बहुरि तुम लिख्या—

द्वितीयाके चन्द्रमाकी ज्यौं आत्माके प्रदेश थोरे खुले कहौ ?

सो दृष्टांत प्रदेशनकी अपेक्षा नहीं, यह दृष्टांत गुणकी अपेक्षा है। अर सम्यक्त्व विषै अनुभव विषै प्रत्यक्षादिकके प्रश्न लिखे थे तुमने, तिनका उत्तर मेरी बुद्धि अनुसार लिखा है। तुम हू जिनवानीतैं अपनी परणतिसैं मिलाप लेना अर विशेष कहां ताईं लिखिये। जो बात जानिए सो लिखनेमें आवे नहिं। मिले कछु कहिये भी सो मिलना कर्माधीन, तातैं भला यह है चैतन्यस्वरूपके उद्यमका अनुभवमैं रहना वर्तना। सो वर्तमानकाल विषै अध्यात्म तत्त्व तो आत्मा है।

तिस समयसार ग्रन्थकी अमृतचन्द्र आ टीका संस्कृत विषै है अर आगमकी चर्चा गो विषै है। तथा और भी अन्य विषै है, सो सो सर्व लिखनेमें आवे नाहिं। तातैं तुम आगम ग्रन्थका अभ्यास रखना अर मग्न रहना अर तुम कोई विशेष ग्रन्थ ज तो मुझकौं लिख भेजना। साधर्मीकै चर्चा ही चाहिए, अर मेरी तौ इतनी बु परन्तु तुम सारिखे भाइनसौं परस्पर प्रेम कहांतक लिखिये? जेतै मिलना लिखा करौ।

फुग बदी ५ विक्रम सं० १८

सो दृष्टांत प्रदेशनकी अपेक्षा नहीं, यह दृष्टांत गुणकी अपेक्षा है। अर सम्यक्त विषै अनुभव विषै प्रत्यक्षादिकके प्रश्न लिखे थे तुमने, तिनका उत्तर मेरी बुद्धि अनुसार लिखा है। तुम हू जिनवानीतैं परणतिसैं मिलाय लेना अर विशेष कहां ताईं ... जो बात जानिए सो लिखनेमें आवे नहिं। मिले कहिये भी सो मिलना कर्माधीन, तातैं भला यह चैतन्यस्वरूपके उद्यमका अनुभवमें रहना वर्तना सो वर्तमानकाल विषै अध्यात्म तत्व तो आत्मा है

तिस समयसार ग्रन्थकी अमृतचन्द्र ... टीका संस्कृत विषै है अर आगमकी चर्चा ... विषै है। तथा और भी अन्य विषै है, सो जानी सो सर्व लिखनेमें आवे नाहिं। तातैं तुम आगम ग्रन्थका अभ्यास रखना अर स्वस्वरुपा मग्न रहना अर तुम कोई विशेष ग्रन्थ जानै तो मुझकों लिख भेजना। साधर्मीकैं तो प... चर्चा ही चाहिए, अर मेरी तौ इतनी बुद्धि है न...। परन्तु तुम सारिखे भाइनसौं परस्पर विचार है, अब कहांतक लिखिये? जेतै मिलना नहीं तेतैं तौ शीघ्र ही लिखा करौ।

मिती फागुन वदी ९ विक्रम सं० १८११।

—टोडरमल।